साधकों का
मासिक प्रेरणा

वार्षिक शुल्क रु. 30/-
आजीवन शुल्क रु. 500/-

बुद्धवर्ष 2555, श्रावण पूर्णिमा, 13 अगस्त, 2011 वर्ष 41 अंक 2

For Patrika in various languages, visit: http://www.vridhamma.org/Newsletter_Home.aspx

धम्मवाणी

हनन्ति भोगा दुम्मेधं, नो च पारगवेसिनो।
भोगतण्हाय दुम्मेधो, हन्ति अञ्ञेव अत्तनं॥
– धम्मपद ३५५, तण्हावग्गो

(संसार को) पार करने का प्रयत्न न करने वाले दुर्बुद्धि को भोग नष्ट कर देते हैं। भोगों की तृष्णा में पड़ कर (वह) दुर्बुद्धि पराये के समान अपना ही हनन कर लेता है।

अशोक और सयाजी ऊ बा खिन

भगवान बुद्ध के महापरिनिर्वाण के लगभग २१० वर्ष बाद अशोक मगध का सम्राट हुआ। उसकी महत्वा कांक्षा इतनी प्रबल थी कि उसने उत्तर भारत में नेपाल के लुंबिनी से लेकर कश्मीर तक और पश्चिम में आज के पाकिस्तान, अफगानिस्तान, इराक और ईरान तक, पूर्व में आसाम, मणिपुर तथा आज के बंगलादेश आदि सभी पूर्वी प्रदेशों को जीत कर अपना साम्राज्य फैला चुका था। दक्षिण के तमिलनाडु और केरल के थोड़े से हिस्सों को छोड़ कर, बाकी सारे दक्षिणी प्रदेशों में भी उसका साम्राज्य स्थापित हो चुका था। बीच में केवल कलिंग का एक बलवान राज्य बचा था, जिसे वह सहन नहीं कर सकता था। परिणामस्वरूप कलिंग पर हमला कर, भीषण रक्तपात करके उसे भी अपने अधीन कर लिया। परंतु इस युद्ध के दूसरे दिन जब उसने इतने सारे निर्दोष लोगों की मृत्यु और उस समृद्ध देश की तबाही की विभीषिका देखी, तब उसका दिल दहल उठा और उसने निर्णय किया कि अब वह तलवार के बल पर किसी राज्य को नहीं जीतेगा।

ऐसी बदली हुई मानसिक अवस्था में अशोक को अपने भतीजे भिक्षु सुमन से बुद्ध की शिक्षा की जानकारी मिली। तत्पश्चात महास्थविर मोग्गलिपुत्त तिस्स के संपर्क में आकर बुद्धवाणी का अध्ययन किया। तब किसी ने बताया कि केवल सैद्धांतिक स्तर पर बुद्धवाणी यानी **परियत्ति** मात्र से बुद्ध की शिक्षा का पूरा ज्ञान नहीं प्राप्त होता। इसके लिए **पटिपत्ति** (प्रतिपादन) यानी विपश्यना साधना करनी होती है। तब उसे यह भी विदित हुआ कि उन दिनों विपश्यना का प्रमुख केंद्र राजस्थान के बैराठ नगर में था। भिक्षु उपगुप्त वहां विपश्यना साधना सिखाते थे। उसे विपश्यना से इतनी लगन लगी कि अपने विशाल साम्राज्य को विश्वसनीय मंत्रियों और सेनापतियों के हवाले सौंप कर वह राजस्थान की यात्रा पर निकल पड़ा। इसमें उसने ३०० दिन बिताये, जिसमें थोड़ा समय यात्रा में, बाकी समय विपश्यना ध्यान सीखने में लगा। जब विपश्यना सीख कर उठा तब अशोक सामान्य अशोक नहीं रहा। उसके भीतर गहन परिवर्तन आया। **एहिपस्सिको** के नियमों के अनुसार अब वह बुद्ध की शिक्षा को सारे साम्राज्य में फैलाने के लिए कटिवद्ध हुआ।

उन दिनों भगवान की वाणी के लिए पुस्तकें तो छपी नहीं थीं। परंतु उसे भगवान का संदेश अपनी सारी प्रजा तक पहुँचाना था। अतः उनकी शिक्षा का सारांश भिन्न-भिन्न शिलालेखों पर खुदवाया और बताया कि बुद्धवाणी यानी परियत्ति का यही सारांश है।

भगवान बुद्ध के लगभग सवा दो सौ वर्ष बाद का यह समय था। उस समय तक बुद्ध की शिक्षा में कोई मिलावट नहीं हुई थी। इसलिए अशोक के शिलालेखों में उनकी शुद्ध शिक्षा का सार दिखायी देता है।

१. भगवान ने केवल **परियत्ति** ही नहीं, बल्कि **पटिपत्ति** यानी प्रतिपादन को अधिक महत्त्व दिया था। अशोक के शिलालेखों में भी स्थान-स्थान पर **पटिपत्ति** और **निज्झत्ति** यानी विपश्यना के अभ्यास के महत्त्व का उल्लेख है।

२. भगवान की शिक्षा किसी एक संप्रदाय तक सीमित नहीं थी, बल्कि सब के लिए थी। विरोधी से विरोधी व्यक्ति भी उनकी शिक्षा के संपर्क में आकर पूर्णतया परिवर्तित हो जाया करता था। अशोक के समय समाज में दो बड़े संप्रदाय थे-- श्रमण और ब्राह्मण। भगवान बुद्ध ने जिस प्रकार धर्म के आधार पर समाज के सभी संप्रदायों के लोगों को एक साथ जोड़ने का काम किया, उसी का अनुसरण करते हुए अशोक ने भी श्रमण और ब्राह्मण में कोई भेद नहीं किया। वह दोनों को समानरूप से दान-दक्षिणा देता रहा और लोगों को भी दोनों को ही दान-दक्षिणा देने के लिए प्रेरित करता रहा।

३. श्रमण और ब्राह्मण की मान्यता में यद्यपि बड़ा भेद था, परंतु विपश्यना करने पर दोनों का यह भेद दूर होता गया। समाज के दोनों महत्वपूर्ण अंग परस्पर भाईचारे का जीवन जीने लगे, क्योंकि दोनों ने ही विपश्यना द्वारा धर्माचरण को अपनाया। अशोक के शासनकाल में इन दोनों संप्रदायों में न कभी तनाव हुआ और न ही कोई दंगा-फसाद।

४. सम्राट अशोक के समय उसकी प्रजा में जितने भी छोटे-बड़े संप्रदाय थे, उन सब को उसने विपश्यना की ओर मोड़ा और यह सिद्ध किया कि विपश्यना किसी एक संप्रदाय तक सीमित नहीं है बल्कि वह सब की है, सार्वजनीन है।

५. बुद्ध के समय जिन साठ भिक्षुओं ने उनके सांप्रदायिकताविहीन शुद्ध धर्म को फैलाने के लिए धर्मदूतों के रूप में जो धर्मचारिका की, इससे धर्म फैलता गया और दिनोंदिन अधिक से अधिक प्रसारित होता गया। यह उत्तर भारत में दूर-दूर तक फैला। अनेक लोगों ने इसे सहर्ष स्वीकार किया।

उन दिनों भारत में जो अनेक सांप्रदायिक मान्यताएं थीं उनमें ६२ प्रमुख थीं। उनको मानने वाले लगभग सभी लोग बुद्ध की शिक्षा के संपर्क में आकर, उसी में समाहित हो गये।

६. अशोक ने भी सभी वर्ग के लोगों को धार्मिक जीवन जीने के लिए विपश्यना विद्या में पकाया। पुरुषों को विपश्यना आचार्य और महिलाओं को आचार्याएं बनाया ताकि वे विभिन्न संप्रदाय के लोगों को धर्म सिखा सकें। भिक्षु आचार्य भी थे ही। वे सब मिल कर समग्र भारत में दूर-दूर तक विपश्यना का प्रशिक्षण देने लगे। आज इसी परंपरा को पुनर्जीवित करते हुए गुरुदेव ऊ बा खिन ने केवल बर्मी बुद्धानुयाइयों को ही नहीं, बल्कि अन्य अनेक लोगों को भी यह कल्याणी विद्या सिखायी।

७. सम्राट अशोक को विदित हुआ कि भगवान बुद्ध ने अपने जीवनकाल में कुल ८४,००० उपदेश दिये थे। इसलिए उसने अपने साम्राज्य में स्थान-स्थान पर ८४,००० विपश्यना केंद्र स्थापित करने का निर्णय किया। अशोक ने इन सभी केंद्रों में छोटे-छोटे चैत्य बनवाये और जहां तक संभव हुआ उनमें भगवान बुद्ध की शरीरधातु के छोटे टुकड़े सन्निधानित किये। परंतु इतने पगोडाओं के लिए इतनी सारी शरीरधातु कहां से आती? अतः उसने भगवान की चिता की भस्म को, जो राजगीर में पाषाण स्तूप में सन्निधानित थी, छोटी-छोटी डिबियों में रख कर, उन्हें अधिकांश पगोडाओं में स्थापित किया। वे ही भिक्षुविहार बने, क्योंकि विपश्यना सिखाने में निपुण कुछ-कुछ भिक्षु आचार्य इन केंद्रों में विहार करते थे और आसपास के उपासकों को प्रशिक्षण देते थे। उसका उद्देश्य यही था कि लोग धर्म को आचरण में उतारें और भगवान की शरीरधातु तथा चिता-भस्म की पावन तरंगों से उसका सारा साम्राज्य तरंगित होता रहे और प्रजा उससे लाभान्वति होती रहे। उसने तीन बड़े पक्के चैत्य भी बनवाये यथा-- सारनाथ, सांची और भरहुत के। इनमें भगवान बुद्ध तथा अरहंतों की शरीरधातुएं सन्निधानित की।

८. अशोक ने अत्यंत करुणापूर्वक अपने कारागृहों के कैदियों को भी धर्म सिखा कर दुःखमुक्त किया ताकि उनमें अच्छे बदलाव आयें। आज भी इसी प्रकार भारत, म्यंमा तथा विश्व के अनेक देशों के कारागृहों में विपश्यना के शिविर लगने लगे हैं और कैदियों के आचरण में स्पष्ट बदलाव आ रहा है।

९. अशोक ने जो कुछ किया वह भगवान के परिनिर्वाण के लगभग २५० वर्षों के भीतर ही किया। भगवान की शिक्षा तब तक तरोताजा थी, शुद्ध थी। उसमें कोई दूषित सम्मिश्रण नहीं हो पाया था।

१०. अशोक ने भगवान बुद्ध की शुद्ध शिक्षा केवल भारत ही में ही नहीं, बल्कि सुदूर ईरान, ईराक, मिश्र और रोम तक पहुँचायी। परंतु वहां वह कुछ समय बाद विलुप्त हो गयी। दक्षिण-पूर्व में श्रीलंका, म्यंमा, थाईलैंड, कंबोडिया, लाओस आदि देशों में भेजी गयी बुद्ध-शिक्षा आज तक कायम रही।

११. सम्राट अशोक महापराक्रमी था। वह चाहता तो पड़ोस के अन्य देशों को भी जीत कर अपना साम्राज्य और अधिक बढ़ा लेता। परंतु ऐसी राज्यलिप्सा त्याग कर, उसने लोगों को धर्माचरण की ओर मोड़ा। धर्म का साम्राज्य फैला कर, लोगों का हृदय जीता और उनका हृदय-सम्राट बन गया।

१२. समय पाकर किसी-किसी देश में उसके द्वारा भेजी हुई पावन विद्या विकृत भी हुई। परंतु बर्मा में जो बुद्धवाणी और विपश्यना विद्या भेजी, उसे वहां के श्रद्धालु लोगों ने पीढ़ी-दर-पीढ़ी, जैसे प्राप्त हुई थी, वैसे विशुद्ध रूप में जीवित रखी। इसके द्वारा अनेक लोगों का कल्याण होता रहा। यह भी सच है कि इस शुद्ध परंपरा की कुछ शाखाओं ने इसमें कहीं-कहीं थोड़ा-बहुत परिवर्तन करके इसे दुर्बल किया तथापि एक शाखा की क्षीण धारा ऐसी भी थी, जिसने इसमें जरा भी रद्दोबदल नहीं होने दिया और पीढ़ी-दर-पीढ़ी गुरु-शिष्य परंपरा द्वारा इसे बिल्कुल शुद्ध रूप में कायम रखा वैसे ही जैसे सम्राट अशोक ने उनके देश में भेजा था।

१३. इस धारा के वर्तमान समय के प्रमुख भदंत लैडी सयाडो हुए जिन्होंने निर्णय किया कि जैसे बुद्ध और अशोक के समय गृहस्थ आचार्य-आचार्याओं की परंपरा थी, वैसी ही परंपरा को पुनर्जीवित किया जाना चाहिए। एक मान्यता यह चली आ रही थी कि बुद्धशासन के २५०० वर्ष पूरे होने पर और दूसरे बुद्धशासन के २५०० वर्ष के आरंभ होने पर, बुद्धशिक्षा जोरों से फैलेगी और अनेक लोगों का कल्याण करेगी। इसलिए इस कल्याणकारी निर्णय के कारण भदंत लैडी सयाडो जी ने सयातैजी को धर्म में पूर्णतया निपुण करके इस परंपरा का पहला गृहस्थ आचार्य नियुक्त किया। सयातैजी ने यह विपश्यना विद्या गृहस्थों को ही नहीं, बल्कि कुछ एक भिक्षुओं को भी सिखायी।

१४. उनके बाद गुरुदेव सयाजी ऊ बा खिन इस परंपरा के दूसरे गृहस्थ आचार्य बने। सयाजी ऊ बा खिन की शिक्षा में हम बुद्ध और अशोक के दर्शन करते हैं। उनके सायंकालीन दैनिक प्रवचनों में परियत्ति समायी रहती थी। जबकि इसे अधिक विवरण से जानने के लिए उन्होंने अपने कुछ एक प्रमुख शिष्यों को ही उद्‌बोधित किया। शिविरों में दिन भर पटिपत्ति का ही अभ्यास करवाते थे।

१५. उनके प्रशिक्षण में मनुष्य-मनुष्य में कहीं कोई भेदभाव नहीं था। वे किसी संप्रदाय के मान्यता की कभी निंदा नहीं करते थे, बल्कि उसे धर्म की दृष्टि से समझने-समझाने का प्रयत्न करते थे। यथा--

एक घटना-- अमेरिका के एक प्रसिद्ध लेखक और पादरी को धर्म देते हुए जब उसे तीन रत्नों की शरण लेने को कहा तब अपनी मान्यताओं में दृढ़ होने के कारण उसने विरोध प्रकट किया और कहा कि वह **बुद्धं सरणं** के स्थान पर, **जीसस सरणं गच्छामि** कहेगा। गुरुदेव मुस्कराये। उन्होंने कहा, ठीक है यही कहो! आखिर इस समय बुद्ध आसमान में तो बैठे नहीं हैं जो उनकी शरण लेने वाले की इच्छापूर्ति करते रहते हैं। वस्तुतः शरण बुद्ध के गुणों की ही लेनी होती है। जीसस में भी अनेक गुण थे। उनसे प्रेरणा लेकर उन्हें अपने जीवन में उतारने की कोशिश करना। तुम जीसस की शरण लो तो उनके गुणों की, न कि किसी व्यक्ति की। पादरी ने इसे स्वीकार करके काम करना आरंभ किया। शिविर समाप्त होते-होते उसे धर्म की सांप्रदायिकताविहीन शुद्धता समझ में आ गयी। प्रारंभिक दिवस पर जो विरोध प्रकट किया था, उस पर पश्चाताप करते हुए उसने गुरुदेव से क्षमा मांगी।

१६. एक और महत्त्वपूर्ण घटना-- इस परंपरा की मान्यता में एक और महत्त्वपूर्ण आदर्श यह है कि धर्म अनमोल है। उसका कोई आर्थिक मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। धर्म सिखा कर उससे कोई धन हासिल करना अधर्म है। अतः सर्वथा वर्जित है। यदि धन कमाना हो तो व्यापार के लिए अन्य क्षेत्र हैं ही। धर्म कोई व्यापारिक वस्तु नहीं है जिस बेच कर धन कमाया जाय। ऐसा हो तो जैसे एक व्यापारी व्यापार द्वारा धन कमा कर धनी होता है, वैसे ही एक

अधार्मिक धर्माचार्य धर्म सिखा कर अपने शिष्यों से धन बटोरता है। ऐसे गुरु-शिष्य सदा के लिए धर्म से वंचित ही रह जायँगे। अतः इस परंपरा में भगवान के इस आदेश का अक्षरशः पालन किया जाता है कि -- **धम्मेन न वणिं चरे**। अर्थात धर्म को व्यवसाय का विषय (commercial commodity) न बनने दे। यदि कोई धर्माचार्य कहलाने वाला व्यक्ति ऐसा दुष्कर्म करता है तो वह धर्म का नहीं, बल्कि अधर्म का प्रसारण करता है।

१७. परंतु कुछ लोग ऐसा जानबूझ कर करने लगते हैं। अशोक के शासनकाल के लगभग १०० वर्ष तक धर्म अपने शुद्धरूप में जीवित रहा। धर्मप्रसारण से धर्मविरोधियों को आर्थिक हानि होती थी। इसलिए उन्होंने विभिन्न प्रकार के षडयंत्र रच कर धर्म को दूषित करना आरंभ कर दिया और इस कारण वह आज से २००० वर्ष पूर्व अपनी मौलिक शुद्धता खो बैठा। मैं जब कभी सुनता हूं कि इसका सारा दोष ब्राह्मणों को दिया जाता है तब मन में बड़ी पीड़ा होती है। दोष सभी ब्राह्मणों का नहीं, बल्कि बुद्ध-शिक्षा से विशिष्ट हानि केवल पुरोहित वर्ग को हुई थी। उनमें से कुछ पुरोहितों ने दुष्कर्म किया जिसका सारा दोष सारे ब्राह्मण समाज को नहीं दिया जाना चाहिए। मैंने अपने जीवन में बहुत से सात्विक ब्राह्मणों को देखा है। मेरी प्रारंभिक शिक्षा के अध्यापक ब्राह्मण ही थे। उन जैसे सरल, स्वच्छ स्वभाव वाले व्यक्ति को धर्मविरोधी कहा जाना कितनी बड़ी भूल है! यह खूब समझ लेना चाहिए कि हर ब्राह्मण पुरोहित नहीं होता, लेकिन यह भी सच है कि हर पुरोहित ब्राह्मण ही होता है। इन पुरोहितों में भी जिस किसी ने धर्म को दूषित करने का दुष्कर्म किया, वही दोषी है, अन्य नहीं।

१८. गुरुदेव ने धर्म के आदर्शों का परिपूर्णरूप से पालन किया। जिस व्यक्ति ने अपनी सरकारी नौकरी के दिनों **SAMB** जैसे व्यावसायिक संस्थान की अध्यक्षता की, जहां सामान्य कर्मचारी भी बेइमानी से लाखों तथा बड़े अधिकारी तो रिटायर होने तक करोड़ों का वारा-न्यारा करते थे, वहां धर्म में पका हुआ यह विपश्यी शासनाधिकारी इस काजल की कोठरी में से बिल्कुल बेदाग निकल सका।

१९. सयाजी धर्म सीखने वाले साधकों से अपने लिए एक पैसा भी नहीं लेते थे। शिविर समापन पर जब हम उनके चरणों के पास कुछ रखते तब वे तुरंत साधना केंद्र के व्यवस्थापक को बुला कर हमें दान की रसीद देने के लिए कहते। साधकों से दान लेना तो दूर, वे उनसे कभी ऋण लेना भी अच्छा नहीं समझते थे। अनिवार्य अवस्था में कुछ लिया भी तो उसे चुका कर ही संतुष्ट होते थे।

२०. एक महत्त्वपूर्ण घटना--

सयाजी के पास एक छोटा-सा टूटा-फूटा मकान था। रिटायर होने के पहले वे उसे सुधार कर अपने बच्चों के लिए एक साधारण निवास का निर्माण कराना चाहते थे। इसके लिए बिल्डर ने बीस हजार मांगे। मैं जानता था कि गुरुजी के पास इतनी पूंजी नहीं थी। वे किसी से कभी मांगेंगे भी नहीं। मेरे लिए यह राशि बहुत मामूली थी। अतः मैंने विनम्रतापूर्वक सुझाव दिया कि मैं दान देकर इस कमी की पूर्ति कर दूंगा। परंतु उन्होंने यह कहते हुए मना कर दिया कि एक धर्माचार्य को अपने लिए शिष्य से जरा भी दान लेना सर्वथा अनुचित है। साधक केवल केंद्र को ही दान दे सकता है। तब मैंने यह सुझाव दिया कि यदि आप मुझसे दान नहीं ले सकते तो इसे मैं आपको ऋण के रूप में उधार दे रहा हूं। आप मुझे इसका भुगतान अपनी सुविधानुसार कर देना। विकट परिस्थिति में उन्होंने ऋण लेने का यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया और मैंने बिल्डर को पैसे देकर मकान के निर्माण का काम आरंभ करवा दिया। जब तक वे नौकरी पर थे, अपने वेतन से हर महीने पैसा देते रहे। परंतु जब रिटायर हुए तब भी पांच हजार देने शेष थे। अब यह ऋण उनकी छोटी-सी पेंसन से चुकाना था। जब चेक आता, तब उसमें से एक पैसा भी रखे बिना, पूरा चेक मुझे दे देते। उसे स्वीकार करना मेरे लिए बड़ा दुःखदायी था। परंतु धर्म के नियमानुसार मैं अपने गुरु की एकमात्र छोटी-सी आय की पूरी राशि बेमन से स्वीकार करने के लिए मजबूर था।

२१. उन्हीं दिनों ऐसा हुआ कि मेरी ताई मां जिसने मुझे गोद लिया था, वह मरणासन्न हुई। सयाजी के साथ सात वर्षों की साधना में उसने बहुत प्रगति की थी। वह सबको बहुत प्रिय लगती थी। गुरुदेव का उसके प्रति बहुत स्नेह था। उसे वे 'बूढ़ीमां' कह कर संबोधित करते थे। मृत्यु के कुछ समय पहले उसने कई अस्पतालों, विद्यालयों और अनाथाश्रम जैसी धर्मार्थ संस्थाओं को पांच-पांच हजार का दान देने का निर्णय किया। इसके साथ-साथ पांच हजार उसने सयाजी को भी देने का प्रस्ताव किया। यह सुन कर मैं अत्यंत प्रसन्न हुआ कि गुरुदेव इसे अवश्य स्वीकार कर लेंगे और इस प्रकार बचे हुए पांच हजार के ऋण से सर्वथा उऋण हो जायँगे। लेकिन जैसे ही मैंने पांच हजार रुपये गुरुदेव को दिये और कहा कि यह मरणासन्न बूढ़ीमां की आपके चरणों में भेंट है, तब बूढ़ीमां की मंगलकामना करते हुए उन्होंने अपने सहायक को बुलाया और आदेश दिया कि कल सुबह भिक्षुओं को बुलाकर इसे संघदान में दे देना। मैं क्या करता? दुःखी मन से हर महीने उनकी मामूली पेंसन का चेक मैं तब तक लेता रहा, जब तक कि उनका पूरा कर्ज उतर नहीं गया। आज भी मैं इस महान व्यक्ति के ऊंचे आदर्शों को याद करता हूं तो रोमांच होता है। अपने जीवन में नैतिक निष्ठा के वे कैसे अनूठे उदाहरण थे!

धन्य है ऐसा धर्म और धन्य है धर्म का महान आदर्श! धर्म के आदर्श के अनुसार जीवन जीने में सब का मंगल ही मंगल समाया हुआ है!

कल्याणमित्र,

सत्यनारायण गोयन्का

मंगल मृत्यु

जयपुर के श्री मोहनलाल केडिया बालशिविर शिक्षक थे। घर पर ही बात-चीत करते हुए शरीर त्याग दिया। वे प्रारंभ से ही विपश्यना से जुड़े थे और अनेकों के धर्मलाभ ले सकने में सहायक हुए थे।

मुंबई के डॉ. रोहित बी. मेहता ने ९० वर्ष की उम्र में ७ जनवरी को शांतिपूर्वक शरीर त्याग किया। उन्होंने अनेक दस-दिवसीय शिविर तथा दीर्घ शिविर भी किये थे और अपने अनेक रोगियों को धर्म से लाभान्वित करवाया।

बुद्ध के पावन स्थलों की तीर्थयात्रा

भारतीय रेल्वे ने **महापरिनिर्वाण एक्स्प्रेस** नाम से एक वातानुकूलित गाड़ी चलायी है जो वर्ष में १४ बार सारनाथ, बुद्धगया, लुंबिनी आदि की तीर्थयात्रा कराती है। इनमें से एक बार **विपश्यना विशेष गाड़ी** के रूप में यह **२५ फरवरी,** २०१२ को **दिल्ली** से रवाना होगी और **४ मार्च** को **दिल्ली** वापस लौटेगी। साधकों के लिए इस विशेष गाड़ी के अतिरिक्त, अन्य १३ यात्राओं में भी किराये में १५ प्रतिशत की छूट है।

इस छूट के लिए किसी सहायक आचार्य से **विपश्यी** होने का **प्रमाण-पत्र** (अनिवार्य रूप से) लेकर **संपर्क करें**-- श्री हेमंत शर्मा <hemant.sharma@irctc.com>, <buddhisttrain@irctc.com> और उसकी प्रतिलिपि धम्मगिरि के ईमेल-- <info@giri.dhamm.org> पर भेजें। अधिक जानकारी और बुकिंग के लिए -- **Visit**: **www.railtourismindia.com/buddha**; **Contact:** Sri Hemant Sharma, Phone: 91-11- 2370-1100 & 2370-1174; Mobile: + 91-9717644798.

Registered No. NSK/46/2009-2011

WPP Postal License No. AR/Techno/WPP-05/2009-2011

शरदपूर्णिमा के उपलक्ष्य और पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य में 'ग्लोबल विपश्यना पगोडा' पर एक दिवसीय शिविर

९ **अक्तूबर,** २०११, **रविवार, समयः** प्रातः ११ बजे से अपराह्न ४ बजे तक, **'ग्लोबल विपश्यना पगोडा'** के बड़े धम्मकक्ष (डोम) में **पूज्य गुरुदेव के सान्निध्य** में **एक दिवसीय** शिविर का लाभ उठाएं। कृपया ध्यान दें कि इस विशाल शिविर की व्यवस्था सुचारुरूप से हो और आपको किसी प्रकार की असुविधा न हो, इसलिए **बिना बुकिंग कराये न आएं। बुकिंग संपर्क : मो. 09892855692, 09892855945, फोन नं.: 022-28451170, 33747543, 33747544, (फोन बुकिंग समयः** प्रातः **११** से सायं ५ तक, प्रतिदिन) **ईमेल Registration:** oneday@globalpagoda.org; **Online Registration:** www.vridhamma.org

नये उत्तरदायित्व

आचार्य

1. Mrs. Grace Reed, *Australia,* Spread of Dhamma

वरिष्ठ सहायक आचार्य

1. Ms. Sara Colquhoun, *Australia*
2. Ms. Anna Schlink, *Australia*
3. Mr. Kim-Fong Lee, *Malaysia*

4-5 Mr. Sin-Fatt Yeo & Mrs. Pek-Hia Khow, *Malaysia*.

अतिरिक्त उत्तरदायित्व

वरिष्ठ सहायक आचार्य

1. Ms. Lallie Pratt, *USA*

To serve Mid-Atlantic Region, USA

नव नियुक्तियां

सहायक आचार्य

१. श्रीमती मंजुला भोसले, पुणे
२. श्री भगवान सरदार, यवतमाल
३. श्री संजय सनादे, मुंबई
४. श्री ओम प्रकाश शर्मा, भरतपुर

5. Mr. Brihas Sarathy, *Canada*
6. Mrs. Song Jun-ying, *People's Republic of China*
7. Dr Judith Shaw, *Australia*

8-9. Mr. Grisha Krivchenia & Mrs. Rosa Blair, *USA*

बालशिविर शिक्षक

१. श्री अजीत सोलंकी, गांधीनगर
२. श्री शंकर ठक्कर, कच्छ
३. श्री जगदीशभाई पटेल, हिम्मतनगर
४. सुश्री लता कोवेलमुदी, हैदराबाद
५. श्रीमती मेघना प्रदीपक, हैदराबाद
६. श्री राजू पी.आर. रेड्डी, आं.प्र.
७. श्री साई प्रसाद चिलुवेरी, निजामाबाद
८. श्री प्रह्लाद तरिगोप्पुला, हैदराबाद

9. Daw Nu Nu Aung, *Myanmar*
10. Daw Om Mar, *Myanmar*
11. Daw Cethar, *Myanmar*
12. U Sai Than Aung, *Myanmar*
13. U toe Toe Win, *Myanmar*
14 Mr. Chang Jih Liang, *Taiwan*
15. Ms. Huang Wen Ling, *Taiwan*
16. Mr Lin Yi -Sheng, *Taiwan*

दोहे धर्म के

गुरुवर! तुम मिलते नहीं, धरम गंग के तीर।
तो बस गंगा पूजता, कभी न पीता नीर॥

अहो भाग्य! सद्गुरु मिले, कैसे संत सुजान!
मार्ग दिखाया मुक्ति का, शुद्ध जगाया ज्ञान॥

अंतर की प्रज्ञा जगी, होए दूर विकार।
तन मन शीतलता जगी, गुरुवर का उपकार॥

धर्म दिया गुरुदेव ने, कैसा रतन अमोल।
मृत्युलोक के जीव को, अमृत का रस घोल॥

सद्गुरु की संगत मिली, मिला धर्म का सार।
जीवन सफल बना लिया, सिर का भार उतार॥

दुर्लभ सद्गुरु का मिलन, दुर्लभ धर्म मिलाप।
धर्म मिला सद्गुरु मिले, मिटे सभी संताप॥

केमिटो टेक्नोलॉजीज (प्रा०) लिमिटेड
८, मोहता भुवन, ई-मोजेस रोड, वरली, मुंबई- 400 018
फोनः 2493 8893, फैक्सः 2493 6166
Email: arun@chemito.net
की मंगल कामनाओं सहित

दूहा धरम रा

धरम दियो कैसो सबळ, पग पग करै सहाय।
भय भैरव सब छूटग्या, निरभय दियो बणाय॥

धन्य! दियो गुरुदेवजू, विपस्सना रो दान।
हिवड़ो तो हरखित हुयो, पुलकित होग्या प्राण॥

पथ भूल्यो दिग्भ्रम हुयो, रह्यो हियो अकुळाय।
धन धन धन गुरुदेवजू! सतपथ दियो दिखाय॥

भटकत भटकत बीतती, मिनख जूण री खोळ।
जदि गुरुवर देतो नहीं, धरम रतन अणमोल॥

सतगुरु री करुणा जगी, दियो धरम रो सार।
संप्रदाय री पोट रो, दीन्यो बोझ उतार॥

गुरुवर तेरै पुन्य रो, कैसो प्रबळ प्रताप।
जागै बोध अनित्य रो, दूर करण भवताप॥

एक साधक
की मंगल कामनाओं सहित

'विपश्यना विशोधन विन्यास' के लिए प्रकाशक, मुद्रक एवं संपादकः राम प्रताप यादव, धम्मगिरि, इगतपुरी-422403, दूरभाष : (02553) 244086, 244076.
मुद्रण स्थान : अक्षर चित्र प्रिंटिंग प्रेस, 69- बी रोड, सातपुर, नाशिक-422007. **बुद्धवर्ष** 2555, **श्रावण पूर्णिमा, 13 अगस्त, 2011**

वार्षिक शुल्क रु. **30/-,** US $ 10, **आजीवन शुल्क** रु. **500/-,** US $ 100. **'विपश्यना' रजि. नं. 19156/71. Registered No. NSK/46/2009-2011**

Licenced to post **without Prepayment of postage** -- WPP Postal Licence No. AR/Techno/WPP-05/2009-2011
Posting day- **Purnima of Every Month,** Posted at **Igatpuri-422403,** Dist. Nashik (M.S.)

If not delivered please return to:-

विपश्यना विशोधन विन्यास
धम्मगिरि, इगतपुरी - 422403
जिला-नाशिक, महाराष्ट्र, भारत
फोन : (02553) 244076, 244086, 243712, 243238. **फैक्स :** (02553) 244176
Email: info@giri.dhamma.org
Website: www.vridhamma.org